

years there was a departure in one case.

So far as the year under report is concerned, 1957-58, there were 8,676 cases in which advice was tendered by the Commission, the Government accepted their advice in all the cases. This is a matter which has to be noted, and the Commission in their Report have rightly pointed out that in no single case was their advice departed from.

**Mr. Deputy-Speaker:** Is the hon. Minister likely to take some more time?

**Shri Datar:** Yes.

**Mr. Deputy-Speaker:** He may continue the next day.

17 hrs.

MOTION RE REPORT OF SANSKRIT COMMISSION—contd.

**Mr. Deputy-Speaker:** The House will now proceed with further consideration of the following motion moved by Shri Supakar on the 5th May, 1959, namely:—

“That this House takes note of the Report of the Sanskrit Commission, 1956-57, laid on the Table of the House on the 28th November, 1958”.

and also of the amendment moved thereon.

Shri Raghunath Singh may now continue his speech

श्री रघुनाथ सिंह (वागणर्मी)  
उपाध्यक्ष महोदय, कल यादव जी ने संस्कृत के ऊपर आक्रमण किया और कहा कि संस्कृत सामन्तों की भाषा है।

उपाध्यक्ष महोदय . एक बात मैं माननीय सदस्य से कह दू कि वह बहुत ही सजेप में अपनी बात को कहें। दूसरे माननीय सदस्य भी बोलना चाहते हैं और मैं चाहता हूँ कि सका आज सत्रम कर दिया जाए।

श्री रघुनाथ सिंह : १५ मिनट में खरम कर दूंगा।

उपाध्यक्ष महोदय : १० मिनट में खरम कीजिये।

श्री रघुनाथ सिंह : कल मैं सिर्फ तीन चार मिनट बोला था, मुश्किल से १५-१६ लाइने बोली थी।

उपाध्यक्ष महोदय : छः मिनट कल लिये हैं और दस मिनट आज ले लीजिये। सोसह मिनट हो जायेंगे।

श्री रघुनाथ सिंह : बारह मिनट सही।

उपाध्यक्ष महोदय, मैं कह रहा था कि संस्कृत का स्थान भारतवर्ष से बाहर के देशों में १२वीं शताब्दी तक रहा और वहां की यह राष्ट्र भाषा रही। कल यादव जी ने कहा था कि यह सामन्तों की भाषा है। मैं इसके उत्तर में उनको तीन चार बातें बतलाना चाहता हूँ और स्थिति को स्पष्ट करना चाहता हूँ। बर्मा में एक मीन साम्राज्य था ९वीं शताब्दी तक और उसकी राजभाषा संस्कृत थी। कम्बोडिया से फुनन और क्षेमे साम्राज्य थे, जिनकी राज भाषा संस्कृत थी। इंडोनेशिया में श्री विजय शैलेन्द्र और मजहपूठ साम्राज्य थे। इन तीनों साम्राज्यों की जनता की राजभाषा संस्कृत थी। थाईलैंड में आज भी मैं बतलाना चाहता हूँ कि १३,००० शब्दों में से ५,००० संस्कृत के हैं और आज के दिन भी थाईलैंड में हिन्दी से अधिक संस्कृत कं गन्दों का प्रयोग होता है। कम्बोडिया में ११,००० शब्दों में ५,०७० शब्द संस्कृत के हैं।

मैं आपको यह भी बतलाना चाहता हूँ कि जब चीनी पर्यटक इत्सिंग भारत आए थे तो अपने पर्यटन के अनुभवों में उन्होंने लिखा है कि श्रीविजय संस्कृत का केन्द्र है। वहां के लोग संस्कृत को सम्मानते हैं।

## [श्री रघुनाथ सिंह]

इसके साथ ही साथ उन्होने यह भी लिखा था कि जो लोग भारतवर्ष साउथ ईस्ट एशिया में जायें तो उन्हें श्रीविजय में दो वर्ष तक संस्कृत के व्याकरण का अध्ययन करना चाहिये। अध्ययन करने के बाद ही भारतवर्ष में वे जायें और तभी उनको लाभ होगा।

इतना ही नहीं, जितने भी साम्राज्यो का मैंने नाम लिया है उन सभी की जो लिपि थी, वह नागरी लिपि थी। सुवर्ण द्वीप में जो संस्कृत का प्रयोग होता था उसकी लिपि शुद्ध रूप से देवनागरी थी।

आज भी अगर आप देखें तो पता चलेगा कि अफगानिस्तान के एयरवेज का नाम आर्याना एयरवेज है जबकि हमारे एयरवेज का नाम इंडिया इंटरनेशनल है। यह तब है जब कि वहाँ की ९९ परसेंट आबादी मुसलमान है। इंडोनेशिया में भी जहाँ की आबादी ९९ परसेंट मुसलमान है, एयरवेज का नाम श्री गरुड है। आज मुसलमान देश तो संस्कृत का प्रयोग करते हैं लेकिन हमने संस्कृत का प्रयोग करना छोड़ दिया है। उनकी भाषाओं में संस्कृत का प्रयोग भारत में बोली जाने वाली भाषाओं से अधिक होता है।

मैं यह भी कहना चाहता हूँ कि जो लोग यह कहते हैं कि संस्कृत का सम्बन्ध हिन्दू धर्म से है व गलत कहते हैं। धर्म से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। हम किसी भी धर्म को मानने वाले हो सकते हैं, किसी भी भाषा को मानने वाले हो सकते हैं, फिर भी संस्कृत का प्रयोग कर सकते हैं। अफगानिस्तान में ९वीं शताब्दी तक ब्राह्मणशाही थी और वहाँ पर संस्कृत राज भाषा थी। वहाँ के लोग बहुत ज्यादा मुसलमान थे, अधिकांश मुसलमान थे लेकिन मुसलमान होने के ही कारण वे अरबी नहीं बोलते थे। हमें मानना होगा कि कालान्तर में इस्लाम फैला तो लोगों से अरबी धारण की।

संस्कृत प्रायोग की मिकानिषों के बारे में दो बार शब्द कहना चाहता हूँ। वाजपेयी जी ने जो सशोधन पेश किया है, मैं उसका स्वागत करता हूँ और मैं प्रार्थना करता हूँ कि यह सदन भी उसका समर्थन करेगा, हृदय से स्वागत करेगा। उसके पक्ष में वाट देगा।

संस्कृत कमिशन ने यह रिफरेंडेशन किया है कि सकेन्दरी स्टेज तक संस्कृत कम्प्लेसी होनी चाहिये। संस्कृत जरूर कम्प्लेसी होनी चाहिये। मैं आपको ऐतिहासिक उदाहरण देना चाहता हूँ कि सन् १८५७ में जब कि हिन्दुस्तान में तीन युनिवर्सिटियां कायम हुईं अर्थात् बम्बई, कलकत्ता और मद्रास तो तीनों युनिवर्सिटियों ने एंग्लो और इंग्लिश के वास्ते संस्कृत को कम्प्लेसी रखा। आज १०० वर्ष के पश्चात् भी संस्कृत बढ नहीं रही है, वह पीछे जा रही है। इन तीन युनिवर्सिटियों ने संस्कृत के प्रचार के वास्ते जिस तरह में पहले कदम उठाया था आज उस डग से कदम न उठा कर हम पीछे जा रहे हैं। यह एक प्रतिक्रियावादी भावना है। इस भावना को हमको आज रोकना चाहिये। आप देखेंगे कि हमारे सामने यह सवाल पैदा हो सकता है कि सकेन्दरी स्टेज तक हम संस्कृत को क्यों कम्प्लेसी करें ? मैं कहता हूँ कि हिन्दी भाषाभाषी जो क्षेत्र है वहाँ तो हमको उमे सकेन्दरी स्टेज तक कम्प्लेसी करें, लेकिन जो अहिन्दी भाषाभाषी हैं उनके वास्ते मेरा एक सशोधन है। वह यह है कि वहाँ के विद्यार्थियों को ३० नम्बर की छूट दी जानी चाहिये। अगर कोई विद्यार्थी संस्कृत में ऐंग्लो होता है और ३० नम्बर पाता है, साथ ही किसी सब्जेक्ट में फेल हो या ३० नम्बर कम हो तो संस्कृत के ३० नम्बर उसमें ऐड कर दिये जाने चाहिये। अगर और सब्जेक्ट्स में ३० नम्बर ऐड कर दिये जायेंगे तो उसको डिबीजन प्राप्त करने में सुविधा होगी। इस प्रकार उससे अहिन्दी भाषाभाषी क्षेत्र पर संस्कृत

सादी नहीं जायेगी बल्कि वहाँ के विद्यार्थी के वास्ते यह चीज सामने आयेगी कि अगर मैं किसी सम्मेलन में कमजोर हूँ, या एक विषय मेरा प्रच्छा नहीं है तो मुझको ३० नम्बर संस्कृत के प्राप्त हो सकते हैं।

मेरा दूसरा सुझाव यह है कि बहुत से लोग हैं जो कि इंडियन लेग्ज में एम० ए० पास करते हैं। हिन्दी में एम० ए० करते हैं, बंगला में एम० ए० करते हैं, और और भाषाओं में भी पास करते हैं। पेरिस से जाकर हिन्दी की डिग्री लेकर आते हैं, लन्दन से पी० एच० डी० की डिग्री लेकर आते हैं। उनसे यह कहना चाहिये कि अगर कोई इंडियन लेग्ज में डिग्री कोर्स ले तो उसके वास्ते कम्प्लेरी होगा कि वह संस्कृत में भी एक इम्तहान पास करे क्योंकि संस्कृत भारतवर्ष की भाषाओं की मा है। जब तक वे मा को नहीं समझे तब तक बेटी को क्या समझेगे? इसलिये मेरा कहना है कि जो लोग इंडियन लेग्ज में डिग्री प्राप्त करना चाहते हैं उनके वास्ते यह कम्प्लेरी होना चाहिये कि वे संस्कृत का अध्ययन करें और संस्कृत का कोई न कोई इम्तहान पास करें।

नीसरी बात यह है कि रिक्मेन्डेशन्स में एक संस्कृत युनिवर्सिटी का सुझाव दिया गया है। उसमें यह है कि एक संस्कृत युनिवर्सिटी साउथ में होनी चाहिये। हमारे काशी में एक संस्कृत युनिवर्सिटी है। तो जो साउथ के लिये युनिवर्सिटी का सुझाव दिया गया है मैं उसका स्वागत करता हूँ और साथ ही साथ यह भी कहता हूँ कि इस तरह से नार्थ में युनिवर्सिटी हो गई, साउथ में युनिवर्सिटी हो जायगी, बीच में उज्जैन पड़ता है वहाँ भी एक संस्कृत युनिवर्सिटी होनी चाहिये। इस प्रकार से हमारे देश में तीन संस्कृत युनिवर्सिटियाँ होनी चाहिये और वे तीनों सेंट्रल गवर्नमेंट के अधीन होनी चाहिये।

एक सम्मेलन और भी दिया गया है रिक्मेन्डेशन्स में कि एक सेंट्रल संस्कृत बोर्ड

बनाया जाना चाहिये। मैं इस सम्मेलन का भी स्वागत करता हूँ। सेंट्रल संस्कृत बोर्ड का होना अत्यन्त आवश्यक है ताकि हमारे देश में एक यूनिफार्मिटी हो, एकरूपता हो।

इसके बाद मुझे यह कहना है कि जितने संस्कृत विद्यालय देश में हैं, जैसे वृन्दावन में एक गुरुकुल है, ज्वालापुर में एक गुरुकुल है, कागड़ी में एक गुरुकुल है, जहाँ पर कि संस्कृत का अध्ययन होता है, इन संस्थाओं को सरकार से सहायता मिलनी चाहिये। हमारी काशी युनिवर्सिटी को केन्द्रीय सरकार के धोर में अभी कोई सहायता नहीं मिलनी है, उसे सहायता दी जानी चाहिये।

सेंट्रल इन्स्टिट्यूट आफ इन्डोलॉजी की जो रिक्मेन्टेशन है मैं उसका भी समर्थन करता हूँ। साथ ही साथ मैं यह भी कहना चाहता हूँ कि जो संस्कृत के अच्छे ग्रन्थ हैं उनका साहित्य-कारिक प्रकाशन होना चाहिये।

**Shrimati Manjula Devi (Goalpara):** Mr Deputy-Speaker, Sanskrit is a language with which I have long association from my childhood. My first introduction to the study of this language was started at the age of 4 with ओउम नम शिवाय at the time of my *aksharabhyasa*, the commencement of learning. Then, the morning started with the devotional hymn असतो मा सद्गमय तनसो मा ज्योतिगमय मृत्योर्मा मभृत गमय

Afterwards, Sanskrit became part of my life. Sanskrit is also part of the Indian culture because social and religious customs compel us to have our association with that great language. From my childhood I have had this long association at my father's court. Many eminent scholars from all over India came to Pithapuram to sit for an examination—a competitive examination—in Sanskrit and I came in contact with . . .

**Mr. Deputy-Speaker:** The hon. Member should speak a little more

[Mr Deputy-Speaker]

loudly or move forward She is not audible clearly here at the Table

Shrimati Manjula Devi: So, I had a very close association with this great language at my father's court. Great and eminent scholars came to sit for competitive examination in this great language. There were discourses of the highest order in the Sanskrit language in *Tarka*, *Mīmāṃsā*, poetry and literature and religion *Stavadhana*, *Ashṭavadhana* and delightful competition in poetry and *tarka* and *mīmāṃsā* were carried on in the Sanskrit language. There were also thought-provoking subjects discussed and there were religious discourses on *Dvaita*, *Viśiṣṭadvaita* and *Advaita*. I was thrilled with the richness and beauty of this great language and it is for this that I bow down in reverence to this great language, to our culture and to our country.

I greatly welcome the Report of the Sanskrit Commission. In this report great minds of our Indian culture have put forth their ideas and comments. I thank the Commission for the great contribution to our culture and I strongly support the Report.

The first preference of three languages, the mother tongue, the regional language, Hindi or English and Sanskrit is a commendable idea into Sanskrit to be started at the secondary stage. But, I think, Sanskrit should be introduced even at an earlier stage because I do not think 5 years is sufficient.

I give my own example of how this ancient language of Sanskrit and the modern language of English and the regional language could be learnt simultaneously. I was taught our own mother tongue, Telugu, and after the preliminary learning of the words, Sanskrit was introduced. Simultaneously, I learnt the two languages because without Sanskrit the richness of the regional language cannot flourish. It is like the fragrance of the flower. Sanskrit and the regional language are

complimentary to each other; and literature buds forth with Sanskrit in all its splendour. So, I suggest that Sanskrit and the regional languages should be learnt more or less simultaneously.

Moreover, the child's mind is more receptive to learn languages. It is not a burden, it is not an extra strain on the mind as is in the case of adult life. Either English or Hindi, as the different regions demand and wish to learn, can be the third language. The mother tongue and Sanskrit should be compulsory.

I fully support the demand of this Report. I strongly advocate Sanskrit in universities because the universities can give a comprehensive scheme of learning—an elaborate learning—as compared to the process of learning in Gurukuls and Pathshalas. Gurukuls and Pathshalas, of course, have their own merit because there the mind is applied in a concentrated way to know the language without any outside disturbance. So they become adepts and masters of the particular language, and it is absolutely necessary in some cases. I think there is 12 years' course for this gurukul training.

I suggest that both the Gurukul and Pathshalas systems should be encouraged along with the modern way of teaching Sanskrit through Sanskrit universities. The deplorable conditions in the Sanskrit colleges and other seats of learning of Sanskrit must be remedied and more attention should be paid to Sanskrit learning.

I hope the Central Board of Sanskrit studies will soon come into being and help us to bring Sanskrit to its old standard and reverence.

There should be great research in Sanskrit. There are so many books, and so much of literature not known to us, lying in various places. There are some books on *Sanātana Dharma* which have expressed an expert opi-

*Sanskrit Commission*

nion on modern trend of thought *Manu Samhita*, which first introduced the administrative law of the country should also be deeply studied and translated into many regional languages. Take Vedas. So little is known of Vedas by the common man. The Christians know the Bible; the Muslims know the Koran. But how many of the other sections of the Hindus know Vedas? Along with other religious books the Veda should be brought to the common man's knowledge and translations and cheaper editions should be brought out. The depth of knowledge that lies hidden under the Vedas and Upanishads is beyond the knowledge of the common man.

My father has edited the 108 Upanishads in Telugu script. Thus I came to know the great depth and richness of all this Vedic language. There are certain dictionaries in Vedas which I am sure are not very well known because the language of Vedas is so different to the modern Sanskrit, and these obscure books should be published and should be encouraged.

There are other famous books by eminent scholars. Dramas, poetical works and the literary gems of Sanskrit literature should all be translated not only in Indian languages but also in other languages of the world. There is a great respect and yearning to know more of Sanskrit in foreign countries and I hope that our country would come forward to satisfy the thirst of other nations for knowledge.

The importance of Sanskrit language cannot be easily expressed. It is not only of national importance but also of international importance. The unity of the east and the affinity of India, Tibet and China are only through the language of Sanskrit. It is Sanskrit that has brought the great culture of the east to the forefront. With all respect, and as a friendly request and advice, I would like to tell the Chinese that the great books of Sanskrit that

are now in the monasteries of Tibet should be preserved, lest it should be squeezing out the soul of not only India and Tibet but also of China. It is this request I make to our friendly neighbour, the great country of China. Many other manuscripts are lying obscure in other countries. There are some in Germany. It is Germany that has first and foremost spread the greatness of Sanskrit language abroad and raised the standards of Sanskrit to those greatest heights of modern times. It is very commendable that the Sanskrit Commission has come forward with its valuable suggestions how to raise the standard of Sanskrit.

In the utilisation of Sanskrit education, I would like to put forward a few suggestions. The students and graduates, as they come out from the Sanskrit colleges and universities, should be employed and there should be a certain security and better scope for them as in the case of other students and graduates of other universities. The status of the Sanskrit colleges and universities should be of the same standard and in par with those of other universities, and I hope the University Grants Commission would consider this point.

There should also be an economic relief to the great Sanskrit scholars and dramatists, poets and research scientists. Unless there is a release from the economic pressure, the mind cannot be applied to the searching studies of this great language. I hope that the Government would come forward with all facilities to help them.

Mr. Deputy-Speaker: The hon. Member's time is up.

Shrimati Manjula Devi: In the olden days, of course the States and the princely patrons helped them to have the chance to study the great scriptures and the great literature of the Sanskrit language. They also gave them scope and the inspiration and the impetus to write in Sanskrit and bring forward all the beauty and excellence of this great language.

[Shrimati Manjula Devi]

With these few words, I would like to close my speech and I do hope that the recommendations and the report of the Sanskrit Commission would be given deep consideration

17.26 hrs.

श्री श्री० श्री० विश्व (केसरगज)

उपाध्यक्ष महोदय, संस्कृत आयोग पर आज तीन दिन से मसद् के समक्ष विचार किया जा रहा है। संस्कृत की महत्ता के सम्बन्ध में हमारे अधिक में अधिक माननीय सदस्यों ने अपने विचार प्रकट किये हैं यह भी बताया गया है कि संस्कृत भाषा के महत्व का वैदिक साहित्य में लेकर उपनिषदों में, पुराणों में बाल्मीकी रामायण में, गीता में किस प्रकार से वर्णन किया गया है और उसकी क्या देन है। इसके सम्बन्ध में काफी विचार प्रकट किये जा चुके हैं, मैं तो केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि

यदिहास्ति तदन्यत्र यत्रोहास्ति न  
तत् क्वचित्

संस्कृत साहित्य में जो चीज नहीं मौजूद है मैं कहूँगा कि उसका कहीं भी पता न लगेगा। इस चीज को लेकर हमारे देश क लोगों ने विदेशों में जा कर के उपनिषदों का प्रचार किया, ब्रह्म विद्या का प्रचार किया, तत्व ज्ञान का प्रचार किया, जिसकी छाप अब भी विदेशों पर पड़ी हुई है। इन्हीं लिये यह कहा गया है कि विदेशियों ने

स्व स्व चरित्रे शिक्षेरन् पृथिव्या सर्व मानवा  
भारत में आकर अपने-अपने चरित्र का शिक्षण प्राप्त किया।

जहाँ तक संस्कृत शिक्षण अनिवार्य होने की बात है आयोग ने बहुत बड़ा परिश्रम करके कुछ व्यक्तियों से और संस्कृत जानने वालों से और उनके साथ-साथ कुछ सस्थाओं से पूरी तरह से खोज की और उस खोज के बाद उन्होंने जो अपनी रिपोर्ट दी है उसपर विचार

करते हुए मैं समझता हूँ कि संस्कृत का अनिवार्य होना आवश्यक है। संस्कृत का भारतीय संस्कृति और भारतीय सभ्यता से अभ्योन्वय सम्बन्ध है। भारतीय संस्कृति किसी तरह पनप नहीं सकती है, बढ नहीं सकती है और उसका प्रकाश दुनिया के मामने पहुँच नहीं सकता है जब तक संस्कृत साहित्य का पूरा-पूरा प्रसार हिन्दुस्तान के एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक न किया जा सके।

साथ ही मुझे खेद है कि आयोग ने संस्कृत साहित्य के सम्बन्ध में रिपोर्ट देते हुए उसका प्रकाशन अंग्रेजी में किया है। आज भी मैं खेता हूँ कि हमारी केन्द्रीय सरकार अंग्रेजी को ही विशेषता देती है। सम्भवतः आपकी मालूम होगा कि उज्जैन में श्री कान्हीदास जयन्ती मनाने के समय एक रक्षियन विद्वान ने आकर यह कहा कि कालीदास जयन्ती के सम्बन्ध में भी अंग्रेजी में भाषण सुनकर मुझे बड़ा खेद हुआ और मैं तो समझता हूँ कि इस सम्मेलन में मुझे भाग नहीं लेना चाहिये। ऐसी बातें होते हुए भी संस्कृत साहित्य के सम्बन्ध में आयोग की रिपोर्ट अंग्रेजी में आई है। यद्यपि उसमें संकट किया गया है कि उसका संस्कृत में भी अनुवाद करके प्रसारित किया जायेगा, परन्तु मुझे खेद है कि वह मूल रूप से संस्कृत में प्रकाशित नहीं की गई। होना तो यह चाहिये था कि उसकी रिपोर्ट संस्कृत में प्रकाशित की जाती और आवश्यकतानुसार उसका अंग्रेजी में अनुवाद करके जो लोग संस्कृत नहीं समझते वे उनको अबसर दिया जाता कि वे उसको पूरी तौर से देख सकें। ऐसी अवस्था में ज़रूरत इस बात की है कि हम लोग इसकी ओर अधिक ध्यान दें।

संस्कृत साहित्य के सम्बन्ध में परम प्रसन्नता की बात है कि इस सदन के प्रायः सभी सदस्यों ने उसका समर्थन किया है और वास्तव में उसका समर्थन इसलिये आवश्यक है कि आज राष्ट्र भाषा हिन्दी घोषित हुई है

और उन क्षेत्रीय भाषाओं का भी प्रसार करने के लिये, जो कि हमारे संविधान में रक्खी गई है, संस्कृत का ही उपयोग करना होगा। वास्तव में उन सब भाषाओं को भी पूरा-पूरा बल तभी मिल सकता है। उनको तभी पूरा-पूरा साहित्य का भंडार भी मिल सकता है जब संस्कृत साहित्य का प्रचार पूरी तरह से सार्वजनिक रूप से देश के कोने-कोने में किया जाय। इसलिये मैं सबसे पहले इस सुझाव का समर्थन करता हूँ कि संस्कृत की शिक्षा अनिवार्यरूपेण हमारे देश में प्रचलित होनी चाहिये।

इसके साथ ही साथ मैं अपने शिक्षा मंत्रालय से इस बात को भी कहना चाहूँगा कि प्रायः हमारी रिपोर्टें भाज जाया करती हैं और उन रिपोर्टों पर विचार होकर फिर वे आफिमेज में पडी रह जाया करती हैं। मैं तो समझता हूँ कि स्वतंत्रता प्राप्त हुए ११ वर्ष हो चुके हैं और ११ वर्ष बाद कितने विलम्ब में इस बात पर विचार किया गया है। लेकिन अब भी अगर विचार किया गया है तो मैं इसके लिये मंत्रालय की मराहना करता हूँ पर यह प्रार्थना करता हूँ कि वह अधिक से अधिक तीव्रता के साथ इस संस्कृत प्रचार को अपने हाथ में ले और एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक संस्कृत शिक्षा को अनिवार्य बनाये और साथ में संस्कृत को पूरा-पूरा बल दें। आपको यह भी विदित है कि देश में स्वतंत्रता की लड़ाई प्रारम्भ होने पर हमारे स्वर्गीय बंकिम चन्द्र चैटर्जी ने जो राष्ट्र गीत सबसे पहले रखा था, वह बन्दे मातरम गीत संस्कृत भाषा में रक्खा था। उसकी कड़ियाँ संस्कृत भाषा में ही प्रेरित की गईं और जिन को लेकर हमने अपना स्वतंत्रता का आन्दोलन किया और हिन्दुस्तान में स्वतंत्रता की स्थापना की।

संस्कृत के सम्बन्ध में यह भी कहा जाता है कि यह भाषा तो आज गीण हो गई है। आज बहुत लोग इसकी जानकारी नहीं रखते। दुनिया के अन्दर उसके जानकार बहुत कम हैं।

मैं आपको बतलाना चाहता हूँ कि वास्तव में, जैसा कल हमारे एक सदस्य ने कहा, संस्कृत भाषा आज ब्राह्मणों की भाषा न हो कर एक सामन्ती भाषा बन गई है। मैं तो यह कहूँगा कि यह ब्राह्मणों को ही गौरव प्राप्त है कि जिन्होंने उस जमाने में भी जब कि विदेशी शासन यहाँ पर कायम था और जब कि हमारी भाषा को, हमारे देश को और हमारी भावनाओं को हर तरीके से कुचलने की चेष्टा की जा रही थी उस समय भी ब्राह्मणों ने ही संस्कृत को अपनाये रक्खा और अध्यापन और अध्यापन के क्रम को जारी रक्खा और अपने दरवाजों पर बैठ कर विद्यार्थियों को संस्कृत की शिक्षा दी और संस्कृत भाषा को जीवित बनाये रक्खा। आज यही कारण है कि संस्कृत का अस्तित्व दुनिया के सामने मौजूद है। केवल व्याकरण पढ़ लेना ही लोगों ने संस्कृत का पठन-पाठन समझा। वास्तव में राजे महाराजाओं की तरफ से, कुछ धनीमानियों की तरफ से केवल धर्म का भ्रम समझ करके संस्कृत का प्रसार हुआ। संस्कृत का प्रसार इस दृष्टि से बही हुआ क्योंकि विदेशी शासन था और विदेशी शासन में संस्कृत के पनपने की कोई गुंजाइश नहीं थी। इसलिये आज वह समय आया है कि जिसमें हमें भारतीय संस्कृति और सभ्यता को बढ़ाने के लिये और भारतीय संस्कृति को वह स्थान देने के लिये जो कि किसी समय में भारतीय संस्कृति को प्राप्त था, उस संस्कृत भाषा को अनिवार्य शिक्षा करना परम आवश्यक है।

एक माननीय सदस्य ने जो यह कहा था कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से संस्कृत भाषा और गिर गई है और संस्कृत भाषा से परीक्षा देने वाले विद्यार्थियों की संख्या बहुत कम हो गई है तो उनकी यह बात बिल्कुल सत्य है और उसका कारण यह है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले संस्कृत भाषा तो केवल व्याकरण का ज्ञान या कुछ साधारण ज्ञान प्राप्त करके धार्मिक वृत्ति वाले कुछ व्यक्ति

[श्री भ० दी० मिश्र]

से छोटी सी नाम मात्र की जीविका लोग प्राप्त कर लिया करते थे लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद और उन राजा महाराजाओं का अस्तित्व समाप्त हो जाने के बाद मात्र सस्कृत पढ़ाने वालों की जीविका का कोई समुचित प्रबन्ध नहीं है क्योंकि गवर्नमेंट ने उनको कोई सहायता देने की व्यवस्था नहीं रखी है। अब तो शास्त्र का ही मत है कि विद्या अर्धकरी होनी चाहिये उससे जीविका निर्वाह की भी कोई व्यवस्था होनी चाहिये। यह तो ठीक है कि सस्कृत का अध्ययन करके और अर्थशास्त्र आदि पढ़ करके मनुष्य को तत्व-ज्ञान प्राप्त हो सकेगा जिससे उसको शास्वत सुख और शान्ति भी मिलेगी लेकिन उसके साथ ही जीविका निर्वाह की भी व्यवस्था होनी आवश्यक है जिसकी उपेक्षा आज तक हमारी स्वतंत्र गवर्नमेंट करती आई है और आज भी कर रही है। हमन देश के वास्ते पंच-वर्षीय योजनायें तैयार की हैं और इस समय द्वितीय पंचवर्षीय योजना चल रही है और उस योजना के अन्तर्गत पाब लाख गावों के उत्थान करने का बीड़ा हमारी गवर्नमेंट ने उठाया है और उस दिशा में बहुत कुछ काम हो भी रहा है। लेकिन मैं सरकार का ध्यान इस ओर दिलाना चाहता हूँ कि वहाँ पर जो ग्राम सेवकों अथवा ग्राम सेविकाओं की नियुक्तियाँ की जा रही हैं तो उनके लिये ऐसे लोगों को ही चुना जा रहा है जो कि बी० ए० और एम० ए० पास हैं और जिन्होंने कि अंग्रेजी की डिग्री ली है और ऐसे लोग ही ग्रामोत्थान के काम में लगाये जा रहे हैं और विकास खंडों के काम में लगाये जा रहे हैं। मैं नम्रता से यह पूछना चाहता हूँ कि हमारी सरकार इतनी बी० ए० और एम० ए० पास लोगों को ग्राम उत्थान के काम के लिये नियुक्त करके कहा तक इस बात की प्राशा करती है कि वह हमारे ग्राम जीवन से मिल जुल करके और उनके बीच में रह करके सामुदायिक विकास कर सकेंगे, आज हम देख अधिक से अधिक पैसा खर्च करके

कम से कम लाभ हम उठा रहे हैं। इस बात की तरफ गवर्नमेंट का ध्यान मैं दिलाना चाहता हूँ और उसका विशेष कारण यह है कि आज आवश्यकता इस बात की है कि राष्ट्रभाषा हिन्दी जिसको कि सविधान में मान लिया गया है, तथा वह प्रान्तीय भाषायें जिनको भी अपने सविधान में मान लिया गया है, उनके उत्थान के लिये हमारी केन्द्रिय सरकार ने अब तक क्या किया है? मैं समझता हूँ कि उसके लिये सफलता की कुजी यह है कि जीविका देने के लिये ग्राम उत्थान की जो भी योजनायें हो उनमें पूरा पूरा स्थान हिन्दी भाषा भाषियों को या सस्कृतज्ञों को दिया जाय। ऐसा यदि ही तो मैं समझता हूँ कि सस्कृत इतने जोर से पनप सकती है और विकास कर सकती है कि कोई भी भाषा इस तरह से विकास नहीं पा सकेगी। आज यह हमारे दुर्भाग्य की बात है कि हमारे यहाँ के लोग जो कि बुद्धिजीवी कहे जाते हैं वे यह कहते हैं कि हमारे देश में अंग्रेजी भाषा की बहुत आवश्यकता है। मैं तो यह कहना चाहता हूँ कि हमारे लिये यह दुर्भाग्य की बात है, सत्य ही अंग्रेजी की राजनीति तथा वाडित्य का द्योतक है कि उन्होंने अपने थोड़े से राज्य काल में किस तरह हमारी भाषा और हमारे देश के ऊपर इतनी बड़ी अपनी छाप लगा दी कि आज यहाँ के लोग भी यह कहते हैं कि अंग्रेजी भाषा के बिना काम नहीं चल सकता। मैं कहता हूँ कि अगर शासन का बल पाकर के लोगों ने अंग्रेजी भाषा सीखना जरूरी समझा तो उनको अपनी मातृभाषा को सीखने में क्या कष्ट हो सकता है। कुछ लोगों ने यह कहा है कि सस्कृत का विषय अनिर्वाय कर देने से लोगों पर बहुत अधिक बोझ पड़ जायगा। अब हमारे उन मित्रों को मालूम होना चाहिये कि सस्कृत भाषा केवल व्याकरण मात्र नहीं है, सस्कृत भाषा के अन्दर कौटिल्य अर्थशास्त्र मौजूद है और इसी सस्कृत भाषा में महाभारत काल में भीष्म पितामह ने राजनीति का उपदेश दिया था। इसके प्रतिरिक्त कुछ भीष्म



और विदुर नीति के ग्रंथ भी संस्कृत में हैं। आज भी संस्कृत में अमूल्य निधि पड़ी हुई है जिस की जीवन के हर क्षेत्र में पहुंच एवं आवश्यकता है। अब यदि भीष्म पितामह द्वारा दी गई राजनीति की शिक्षा और शुक्र नीति और विदुर नीति के आधार पर हम एक राजनीति का ग्रंथ तैयार करे और उस के आधार पर लोगों को राजनीति सम्बन्धी शिक्षा दें तो आप स्वयं अन्दाजा लगा सकते हैं कि कितनी हमारी शिक्षा मफल होगी और सुखद होगी।

अब यह जो हमारे सामने योजना रक्खी गई है कि हमारे यहां एक संस्कृत विद्यालय केन्द्र की तरफ से खुलना चाहिये, मैं इस सुझाव का स्वागत करता हूँ। इस तरह का विद्यालय केन्द्र की तरफ से अवश्य खुलना चाहिये लेकिन उसका काम केवल रिसर्च करना होगा, अन्वेषण करना होगा। वह केवल यह देखेगा कि संस्कृत भाषा के अन्दर कौन-कौन से मानव धर्म शास्त्र मौजूद हैं, राजनीति कहा तक मौजूद है, हमारे अन्दर कौटिल्य अर्थशास्त्र यानी एकोनामिक्स कहा तक मौजूद है, इन सब बातों का विवेचन करने के बाद वह दुनिया को बता सकेगा कि हमारी भाषा और हमारी संस्कृति ही एक ऐसी संस्कृति है जो कि दुनिया को शाश्वत सुख और शान्ति का संदेश देती है और विश्व को सही मार्ग पर ले चलेगी।

संस्कृत भाषा के एक छोटे से श्लोक के अन्दर आप कितना गूढ़ तत्व भरा पायेंगे।

“अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचन  
द्वयम्

‘परोपकारः पुरायाय अ पायाय पर  
पीडनम्।”

मैं पूछना चाहता हूँ कि क्या इस से भी ज्यादा विश्व को सिखाने के लिये और मानव जीवन के लिए कोई अष्टादश मंत्र हो सकता है? एक छोटे से सूत्र में “पर पीडनम्” दूसरों को

पीड़ा पहुंचाना पापा है यह बताया गया है और दूसरे आधे श्लोक में “परोपकारः पुरायाय” में यह बताया गया है कि दूसरों को सुख पहुंचाना पुण्य है।

अब चूंकि मेरे पास बहुत कम समय है इसलिए मैं अब समाप्त करूंगा। आपने जो मुझे इतना समय दिया उस के लिए मैं आपका आभार मानते हुए कुछ सुझाव आपके सामने रखना चाहता हूँ और एक सुझाव तो यह है कि राष्ट्र भाषा और प्रादेशिक भाषा के माध-साथ संस्कृत की शिक्षा भी पढ़ाई के लिए अनिवार्य विषय कर दिया जाय। मैं तो ऐसा भी समझता हूँ कि प्रान्तीय भाषाओं का प्रसार करने और उन की प्रगति करने के लिये संस्कृत भाषा का एक अनिवार्य विषय होना जरूरी है और जो लोग यह कहते हैं कि ऐसा होने से हमारे विद्यार्थियों पर यह तीन प्रकार के भार हो जायेंगे और उस भार का वहन करना उनके लिए कठिन हो जायगा, मैं उन से इस में सहमत नहीं हो सकता। जैसे कि सभी माननीय सदस्यों ने इस को कहा है कि संस्कृत तो हमारी प्रान्तीय भाषाओं और राष्ट्र भाषा हिन्दी की जननी है और जब ऐसी बात है तो मैं समझता हूँ कि वह भार रूप न होकर सहायक रूप होगी और प्रान्तीय भाषाओं और हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी को बल देगी और उनका विकास करेगी।

आचार्य विनोबा भावे ने इस सम्बन्ध में बहुत ही सुन्दर विचार व्यक्त किये हैं। उन्होंने कहा है कि हम प्रान्तीय भाषाओं और राष्ट्र भाषा हिन्दी इन दोनों को लेकर संस्कृत का ज्ञान प्राप्त कर के शंकर बनें और समस्त संसार को शंकर अर्थात् कल्याण का संदेश दें जिस से कि दुनिया का कल्याण हो सके। हमारे यहां कहा भी गया है :

“सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निराभयाः  
सर्वे भद्राणिपश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख  
भाष्येत्”

[श्री ब० दी० बिष]

इस महान् प्रादर्श को लेकर हम विषय को यह संदेश दें कि हमारा साहित्य इतना ऊँचा है और हमारी संस्कृति इतनी ऊँची है इस से आपको शिक्षा और दीक्षा लेनी चाहिए। इन शब्दों के साथ मैं प्रयोग ने जो संस्कृत के साथ अंग्रेजी को भी अनिवार्य विषय रखने का सुझाव दिया है इस अंग्रेजी वा ने सुझाव को न मानते हुए संस्कृत भाषा को अनिवार्य विषय रखने का और प्रचार प्रवृत्ति विकास करने का समर्थन करता हूँ।

Some Hon. Members rose—

Mr. Speaker: We have been carrying it on for full three days now and we must conclude it today. How much time does the hon. Minister propose taking?

The Minister of Education (Dr. K. L. Shrimall): Twenty to twenty-five minutes.

Mr. Speaker: We must close it at 6-30, I think

Pandit Thakur Das Bhargava (Hissar): May I submit one thing for your consideration and that is that the conclusions of the Sanskrit Commission and of the Official Language Commission, as a matter of fact, to a certain extent overlap each other. When we consider the question of official language in the next Session, may I humbly submit that along with that discussion we may have further discussion of this question also, because it is very important and the questions raised are somewhat alike. With your kindness we have been furnished with this book (Sanskrit Commission Report). We have gone through this during these two days but we have not been able to finish that entirely. We must consider the observations and recommendations of that Commission as well as this Commission together so that we may arrive at the correct result. So, I will beg of you not to conclude this discussion today but continue the dis-

ussion along with the other discussion in the next Session. I want that the Report of Parliamentary Committee on Official Language must be considered along with this report.

Mr. Speaker: Now that Hindi is the official language of the Union—that is a settled fact so far as our Constitution is concerned—whatever might be the recommendation of any other Commission that make Sanskrit the official language of the Union—I am not talking of the Sanskrit language or whether it ought to be made compulsory or not—is not binding. The point which certainly can be made is that for a proper study of our *sanskriti*, culture, *sahitya* and our language, this is the *wordadhar*. Of course, one can say so and then insist upon it. Hon. Members may consider the amendment of Shri Vajpayee also. Then there are many other points, like Board and so on. But to say that this will stand over for the consideration of the question as to whether Sanskrit ought to be made the official language or not shall not be all right. In this we proceed only on the existing Constitution.

An Hon. Member: That is barred.

Mr. Speaker: If it comes in the other one, it shall be all right. Let hon. Members then say that and do so. So far as this matter is concerned, what kind of fillip should be given to Sanskrit, whether it should be made compulsory at any particular stage and, if so, in what areas, what is the Board, these are the only matters which need be gone into here. But I am in the hands of the House so far as this matter is concerned. But how can we indefinitely put it off?

Pandit Thakur Das Bhargava: You were pleased to say that each one of the 21 hon. Members, who stood up, would be given an opportunity. At least those hon. Members must be given an opportunity to express their opinion. 21 hon. Members had stood up when you asked them to do so. They may be given an opportunity. At least that must be kept up.

**Mr. Speaker:** Now those 21 will be endless.

**Shri Narayanankutty Menon (Mukandapuram):** Some more time be given on Saturday. Some time will be left over on that day as only the consideration of the Report of the Union Public Service Commission is left. So, if we go on till 6.30 today and for some more time on Saturday, you will be able to give a chance to all those who are desirous to speak.

**An Hon. Member:** Continue for one more day.

**Shri D. C. Sharma (Gurdaspur):** Nobody has spoken . . .

**Shri Narayanankutty Menon:** You may consider even of giving more representation also.

**Mr. Speaker:** Will the hon. Minister be here on Saturday?

**Dr. Melkote (Raichur):** This is one language which has no linguistic barriers. There are several speakers who would like to participate in the discussion

**Dr. K. L. Shrimali:** I am in your hands. But I may submit that the discussion has not centred round the recommendations of the Commission. Most of the speeches that have been made have been with regard to the importance of Sanskrit in our national life. There can be no two opinions about it. Except one or two hon. Members who have differed on this matter, everybody is agreed on this point. So my humble submission is that discussion has not centred on the recommendations of the Commission, but on the importance of Sanskrit in our national life.

It would be more fruitful if the discussion centres on the main recommendations and my own submission is that since no new points are being made we might as well conclude it today. But I am in your hands; whatever you order I will do.

**Mr. Speaker:** The hon. Minister is in my hands; I am in the hands of the House! I am happy about it.

**An. Hon. Member:** The House is in a mood to continue.

**Mr. Speaker:** But as the hon. Minister says, hon. Members must assist him. He is anxious to do something for Sanskrit and culture. Now there is the Report of the Commission. If hon. Members concentrate on what exactly they want to be done with regard to those recommendations that will be more helpful than saying that Sanskrit is a hoary language and all that—that is admitted.

Inasmuch as so many hon. Members are interested, I would request the hon. Minister to devote some time on Saturday also. That is the last day of the session. We rise on that day; let us rise with Sanskrit (श्री बाबूवे : म. उ. को रेष समर्पयेत्) Now, I would allow only ten minutes to hon. Members. They may eschew from consideration whether Sanskrit ought to be made the official language or not. That may be reserved for a later occasion when the discussion on the official language would come up. They may confine their remarks to the recommendations of the Commission, what kind of help or assistance can be given to propagate Sanskrit and how it can be done. Shri Ghosh, he wants to fly to Calcutta now

15.49 hrs.

**Shri N. E. Ghosh (Cooch-Bihar):** Sir, yesterday we were told that instead of indulging in platitudes we should more usefully express our views on the recommendations of the Commission. I am going to follow that advice.

At the same time I must say that after independence, Government has not given a fair deal to Sanskrit. During the British regime when we were students from Class VI right up to the entrance class and then in the first Arts course, Sanskrit was compulsory. The present-day tendency is to somehow push it out of the curriculum. I think that will not be good for the country.

After twelve years of independence, unfortunately for us, we are seeing

[Shri N. R. Ghosh]

disparous tendencies everywhere. If we realise how much we are indebted to Sanskrit for the concept of *deshamatrika*, how much Sanskrit served as the golden thread to knit the whole of India together, then we could not have been so negligent about the study of Sanskrit

I would strongly support the recommendations of the Sanskrit Commission that not only in the school standard, but in respect of those students who take up arts Sanskrit should be made compulsory, in the case of those students who go in for science at least in the school standard some basic knowledge of Sanskrit is necessary for them. For those who want to prosecute their degree course in the regional language, some basic knowledge of Sanskrit should be made compulsory. That is one of the recommendations, which I strongly support

I have gone through the Report of the Commission from cover to cover and it is extremely difficult for me to disagree or differ from any of the recommendations of the Commission. I fully realise that it is not possible for us unless the constitution is changed to make Sanskrit as the second national language. That was the suggestion of the Commission and that will require the consideration of the House at a later stage. I would suggest that at least for certain purposes Sanskrit should be used as a matter of convention as an informal national language. Barring that, I would submit that so far as the other recommendations are concerned, all may be implemented by the Education Ministry

In this connection I would only submit this, that on account of the language question there have been differences of opinion and disputes in the different tracts of India. We should remember that we were taught in our schools by the British people that India is not a country, that it is a sort of a continent, that there is actually no unifying force—no reality—in the con-

cept of our country. I would ask the hon. Members of this House to read the wonderful book of Dr. Radha Kumud Mukerjee, *Fundamental Unity of India*, and see how he has traced the origin, growth and submission of the concept of the motherland, the concept of *deshapri* though Sanskrit-culture, how actually Sanskrit was responsible for this idea. The famous *sloka* which we recite as a Purificatory *mantra* just after rising,  
( गगने चयुग्मे चैव )  
I know that many of the Members know this *sloka* how it beautifully reminds us every morning this concept of the motherland as a whole.

You know that according to Puranas the body of Sati was cut up into fifty-two fragments and they all fell throughout India, emphasising and sanctifying the idea of the unity of India as a whole before the eyes of the Hindus. At the same time we should know and remember that all the languages of Northern India are born out of the matrix of Sanskrit, and as regards South Indian languages that practically all of them have been transmuted by Sanskrit. Telugu has got about seventy per cent of Sanskrit words, Malayalam a little more, and Tamil a little less. But, as a matter of fact, if we have invoked the aid of any unifying force, if we want to dissolve this difference between the Northern and the South Indian languages, we can do so only through the help of Sanskrit by propagation of Sanskrit, the whole of India will be knit and united together in the same concept and ideology. It is already there, we are merely to develop it.

I would therefore ask the hon. Education Minister who himself is a great Sanskrit scholar, that we will not be doing our duty to our culture of which we are proud if we neglect Sanskrit in that way. As a matter of fact it is apparent that very few people are now learning Sanskrit, because Sanskrit has been neglected, has been practically pushed out of the curriculum of our educational system. The Education Minister knows it

So far as the Northern languages are concerned, it will be useful to remember that Oriya contains about 85 per cent Sanskrit words, Bengali and Assamese about 80 per cent, the languages of Bihar—Maithili, Bhojpuri and Maghadhi the same percentage I should mention here that even in Hindi, Sanskrit predominates from 70 per cent to 55 per cent as you travel from east to west.

Therefore, the most unifying factor which can unite the whole of India in one ideology is through the propagation of the Sanskrit culture which we must try to inculcate in our life, in our university education.

I may here refer to article 351 and the ~~great~~ role that Sanskrit is called upon to play. Article 351 wants to make Hindi as the *rashtra bhasha*, not Hindi as it stands at present but Hindi as will be influenced and enriched by drawing very largely upon the vocabulary of Sanskrit. That is the provision of article 351 of the Constitution. Therefore, if we are to make the *rashtra bhasha* acceptable to the whole of India, we must also change it, transmute it. How? By drawing upon the mother language, namely upon the vocabulary drawn from Sanskrit, and by the impact and influence of the regional languages. Then and then only will it be acceptable to the whole of India. I am quite sure if it is Sanskritised if it changes its form substantially from the present dialect of West UP, there will be no difficulty or dispute about its acceptance by the South Indian people also. Because, their own languages contain a very large percentage of Sanskrit words. I particularly support the general recommendation of the Sanskrit Commission as stated in page 268 of the book the general recommendations of the Commission and also the recommendation about the preservation of the manuscripts. We know, about 50 years ago, one of the scholars of Bengal went to Tibet and got some Sanskrit books copied from there. There was a vast treasure of lost Sanskrit books or their translation in their monasteries. Unfortunately for us,

perhaps, those books have been destroyed. We will not be able to get them now. There are a large number of books to be found in Mongolia and in other regions, Indonesia and even in some portions of China and in our own country. Unless these books are salvaged, unless we make some arrangement for preservation of these books and for copying of these books, a large quantity of our ancient literature will be lost for ever.

I would also request the hon Minister of Education to create an atmosphere for Sanskrit and not to put Sanskrit against Hindi. There should not be any dispute between Hindi and Sanskrit. Sanskrit should be made compulsory. That would help the propagation and acceptance of Hindi as *Rashtra Bhasha* for the whole of India. As regards the language formula, I would also ask the Education Minister to take into consideration the recommendation of the Commission. The Commission has made a very valuable suggestion.

**Dr. K. L. Shrimall:** Is the hon Member aware that the Commission has recommended that Hindi should be replaced by Sanskrit in the language formula?

**Mr. Speaker:** As official language?

**Dr. K. L. Shrimall:** In the three language formula, they have suggested two alternatives. In one alternative, they have suggested that Hindi should be taken out and Sanskrit should be made compulsory in the place of Hindi.

**Pandit Thakur Das Bhargava:** English has been given the place of preference in that formula.

**Shri Raghunath Singh:** Not a single member from the Hindi-speaking area in that Commission.

**Mr. Speaker:** The hon Members is not of the view that Hindi ought to be given up. As I understand him, he says that there ought to be no conflict between Hindi and Sanskrit. Hindi has been accepted as the official language.

[Mr. Speaker]

age. Hindi must be taught. Sanskrit must be taught in addition. There is no good pitting one against another. That is what the hon. Member says. In the areas where Hindi is the mother tongue, there is no difficulty about three languages at all: Hindi, Sanskrit and English, if necessary. Some difficulty arises with regard to other areas where one language has to be learnt. That may be part of the language.

Shri N. R. Ghosh: What I was going to submit was an observation in the report. In any scheme which is made, the Commission is against providing Hindi as an alternative to Sanskrit. I never said that Hindi should not be there. Hindi must be there. Hindi should not be pitted against Sanskrit. That is all that I wanted. I would humbly submit that the report of the Sanskrit Commission is a unanimous report, well argued and well documented. Many of the Members have got international fame for their scholarship and they are all highly respected patriotic Indians. My humble request to the Minister is that the recommendations should be carefully and seriously considered by the Minister and as far as possible those recommendations should be implemented.

18-00 hrs.

श्री० रणबीर सिंह (रोहतक) : अध्यक्ष महोदय, मैं संस्कृत आयोग की एक सिफारिश को छोड़ कर बाकी तमाम सिफारिशों की सिफारिश करता हूँ और वह एक सिफारिश है तीन लैंग्वेज फ़ारमूला के तिलसिले में मैं मानता हूँ कि इस देश के बहुत थोड़े भादमी होंगे, जिन्हें अंग्रेजी पढ़ने की जरूरत होगी। हम भाषायों से अंग्रेजी को छोड़ सकते हैं। तीन भाषायें हम पढ़ें—एक मातृभाषा, दूसरी रिजनाल लैंग्वेज हो या हिन्दी हो और तीसरी संस्कृत। मैं समझता हूँ कि जिसे अंग्रेजी पढ़नी है, वह कालेज में जा कर पढ़ ले। आज हमारे देश की तरफकी में अंग्रेजों का कोई हाथ नहीं है। यहाँ रूसी जानने वाले आई प्राये हैं और ज़िलाई के कारखाने

बूने बना रहे हैं। जर्मनी वाले प्राये, वे कड़केला में बना रहे हैं। इसी तरह से दूसरे भाषा भाषी लोग हमारी हमदाद कर रहे हैं। जिस तरह से उनकी जवानों सीखने या पढ़ने के लिये यह कोई जरूरी नहीं मानता है कि उनको हमारे पाठ्यक्रमों में स्थान मिले, उसी तरह से मैं जानना चाहता हूँ कि अंग्रेजी को क्यों जारी रखा जाये? मैं समझता हूँ कि जैसा रघुनाथ सिंह जी ने कहा है कि जो आयोग के सदस्य वे वे तकरीबन सभी ऐसे इलाकों से आने थे जो हिन्दी भाषा भाषी नहीं थे, इसलिये उन्होंने यह सिफारिश की कि हिन्दी के पाठ्यक्रम को स्कूलों में जरूरी न समझा जाये और कालेजों में जरूरी मान लिया जाये। मैं चाहूँगा कि अगर जरूरी हो तो अंग्रेजी को जगह जरूरी हो।

इसके अलावा, अध्यक्ष महोदय, आप जानते हैं कि गीता का जन्म कुवेत्र में हुआ था—

डा० राम सुभग सिंह (सहसराम) : हरियाना में।

श्री० रणबीर सिंह : और कुवेत्र के अन्दर विश्वविद्यालय बन रहा है। मैं समझता हूँ कि उस विश्वविद्यालय को संस्कृत विश्वविद्यालय के बैकग्राउण्ड में चलाया जा सकता है और उसको सहायता दी जाये।

श्री बाबूदेवी (बलारामपुर) : वहाँ के डाइस-नांसलर को संस्कृत नहीं आती है।

श्री० रणबीर सिंह : मेरे साथी डाइस-नांसलर की बात करते हैं। यह पता नहीं है कि जिन्होंने संस्कृत आयोग की रिपोर्ट लिखी है, उन्हें भी संस्कृत आती थी या नहीं। क्षम ही साथ मैं यह भी कहना चाहता हूँ कि हर एक की भाषा में संस्कृत का कुछ न

कुछ हिस्सा तो है ही। इसलिये उन्हें अपनी भाषा जानते हुए यह तो मान ही लेना चाहिये कि वह संस्कृत का कुछ न कुछ जानते ही हैं।

**अध्यक्ष महोदय :** किसको संस्कृत नहीं आती है, वह भी संस्कृत का बड़ा प्रेमी हो सकता है।

**श्री० रणबीर सिंह :** यही मैं कह रहा

**श्री बाजपेयी :** प्रेमी हो सकते हैं, मगर संस्कृत विश्वविद्यालय के वाइस-चांसलर कैसे हो सकते हैं ?

**Shri D. C. Sharma:** I want to submit that all the members of this commission are learned scholars in Sanskrit.

**Pandit Thakur Das Bhargava:** Where is the doubt? Who doubts it?

**Shri Raghunath Singh:** But they have not written their report in Sanskrit; they have written it in a foreign language?

**श्री० रणबीर सिंह :** अध्यक्ष महोदय, मेरे भाई बाजपेयी जी को क्या मालूम कि हमारे वाइस-चांसलर संस्कृत जानते हैं या नहीं जानते हैं। वह तो सनसने हैं कि चूँकि वह भ्रंशेजी के विद्वान हैं, इसलिये संस्कृत नहीं जानते होंगे।

**श्री बाजपेयी :** मैं ठीक कह रहा हूँ

**श्री० रणबीर सिंह :** अध्यक्ष महोदय, इसमें ज्यादा न जाकर मैं यह कहना चाहता हूँ कि जिस समय मेरे साथी उज्जैन के बारे में बोल रहे थे तो भ्रंशेजी महोदय ने कहा था कि उज्जैन की तरक्की क्यों नहीं हो रही है। मैं आपको बतलाना चाहता हूँ कि मेरे जिले में तीन गुस्कुल हैं, एक भैसवाल में, दूसरा झज्जर में और तीसरा भटिंडू में। लड़कियों के लिये एक गुस्कुल खानपुर में चल रहा है।

उनकी तरक्की नहीं हुई है। आज तरक्की होती है तो हाई स्कूलों की होती है और होगी। इनके लिये लोग लाखों रुपया इकट्ठा करते हैं और सरकार भी लाखों रुपया देती है। उसकी वजह साफ है कि सरकार की नीति जो है वह अभी तक संस्कृत की सहायता करने की नहीं है। उज्जैन की अगर तरक्की नहीं होती है तो इसलिये नहीं होती है कि यूनिवर्सिटी ग्रांट्स कमिशन कहती है कि वहाँ पर उसकी इजाजत के बगैर इसको खोला गया है। इजाजत के बगैर इस देश में लाखों सस्थायें चल रही हैं। आज आप देखें कि इजाजत के बगैर इस देश में लाखों बच्चे पैदा होते हैं तो क्या इस देश के भ्रन्दर उनको खाना खाने को नहीं मिलेगा, कपडा पहिनने को नहीं मिलेगा। इस वास्ते मैं कहना चाहता हूँ कि कोई जरूरी नहीं है कि श्रीमाली जी की इजाजत के बगैर कोई यूनिवर्सिटी स्थापित होती है, तो उसको सजा मिले। मैं समझता हूँ कि अगर उनकी इजाजत के बगैर कोई विश्वविद्यालय बनता है तो उसको हमें शाबाश देनी होगी और उसकी सहायता करनी होगी।

मैं समझता हूँ कि मिशन के पास रुपया सीमित है, कम है। हम वास्ते में चाहता हूँ कि श्रीमाली जी उस रुपये के भलावा और भी रुपया इस कमिशन को दे ताकि ऐसे विश्वविद्यालयों की जो कि उनकी भ्रामा के बिना या बहुत पहले बन चुके हैं, उनकी भी मदद हो सके। यह चीज संस्कृत के विद्यार्थियों के लिये, संस्कृत की पाठशालाओं के लिये तथा उनको तरक्की देने के लिये निहायत जरूरी है और मैं चाहता हूँ कि उनके लिये रुपया निकाला जाये।

मैं चाहता हूँ कि संस्कृत स्कूलों के पाठ्य-क्रम में, सैकेन्ड्री स्टेज में कम्पलसरी हो, लेकिन हो भ्रंशेजी की जगह। अगर मान लीजिये कि कुछ देर तक इस बात के बारे में कोई फैसला नहीं हो सकता है तो मैं

[श्री० रघवीर सिंह]

समझता हूँ कि हिन्दी भाषा अभी इलाको के अन्दर सस्कृत को कम्पलसरी बना दिया जाये तीसरी भाषा के रूप में । हो सकता है कि कुछ भाष्यो को इसमें ऐतराज हो । मेरे भाई प्रकाशवीर शास्त्री जी बैठे हुए हैं और उनके बहुत सारे हिमायती भी हैं और मैं बतलाना चाहता हूँ कि पंजाब के हिन्दी रिजन के अन्दर जो लोग पंजाबी या दूसरी रिजनल भाषा नहीं पढ़ना चाहते हैं, उनका मसला भी इससे हल हो जाता है अगर हिन्दी के साथ कम्पलसरी रिजनल भाषा न रहे और सस्कृत हो जाये ।

श्री अजराम सिंह (फिरोजाबाद)  
अंग्रेजी से क्यों मोह है ।

श्री० रघवीर सिंह : मुझे बिल्कुल मोह नहीं है । मैं चाहता हूँ कि अंग्रेजी जल्दी जाये । लेकिन आप जानते हैं कि जिस भाषा ने हमें डेढ़ दो सौ साल तक गुलाम रखा वह हमारी दिमागी आजादी को बहुत दिन तक दूर रखेगी । लेकिन मैं मानता हूँ कि अंग्रेजी जानी चाहिये । लेकिन मेरी बद-किस्मती है कि जितने हमारे हाकिम हैं, भाई० सी० एस० व भाई० ए० एस० आदि आफिसर हैं, नये पैदा होते हैं, पुराने हैं, वे सब अंग्रेजी के विद्वान हैं और उनका न तो रिजनल भाषा से कोई प्यार है और न ही हिन्दी से प्यार है और न ही सस्कृत से प्यार है, और अगर प्यार है तो केवल अंग्रेजी से है ।

मैं तो चाहता हूँ, जैसा मैंने शुरू में कहा कि तीन भाषायें जरूरी हों, एक रिजनल भाषा, एक हिन्दी और एक सस्कृत । लेकिन अगर अंग्रेजी को इस देश के साथ कुछ दिन बिपटाये रखना है तो फिर भी चाहूंगा कि हिन्दी भाषा आधी इलाको के अन्दर सस्कृत को दूसरी रिजनल भाषा की जगह कम्पलसरी तौर पर पढ़ाया जाये ।

Some hon. Members rose—

Mr. Speaker: Shri Narayanankutty Menon I will call Pandit Thakur Das Bhargava later

I will give opportunity to all professors!

Shri D. C. Sharma: I have to leave tomorrow I will not be here.

Shri Narasimhan (Krishnagiri): Even non-professors may be given an opportunity

Mr. Speaker: Very well I will call one after the other

Shri Narayanankutty Menon: When the debate began on the Report, we were under the impression that at least as far as the question of Sanskrit was concerned, there would be the least controversy and the least heat generated. However, I am compelled to make this remark that yesterday when certain references were made, of course eulogising Sanskrit and emphasising the need of Sanskrit, the tone of the speeches of some of the hon. Members was not at all very fortunate. We have experienced in this country that because of over-zealous championing of the cause of certain languages, the very causes for which those gentlemen are fighting are sometimes spoiled and defeated. Yesterday as the debate was going on, certain references were made not only to Sanskrit alone but to Hindi and English. When some people speak about Hindi with as much passion as possible, some other people get an impression that Hindi is the monopoly of somebody. We have accepted Hindi as the official language and any person in this country has got as much right to say, and be proud of saying, that Hindi is our national language and it is not the monopoly of somebody. But when sometimes some people import so much of passion and heat in their championship of the cause of Hindi, it appears as if somebody is going to force Hindi on somebody else,



who has as much right to speak about Hindi as their language as any other person. Such attempts are not going to succeed.

I make an earnest appeal to the hon. Members who are so much proud of Hindi as our official language and want to see as soon as possible English eradicated from this country and Hindi alone made the official language. Let them think in a cool-headed way about the problem. Let them have an understanding of those people who experience real difficulties. If that understanding is there, if they consider this issue in a cool-headed manner, certainly there will not be any language controversy in this country today. But if this over-zealous championing continues, fissiparous tendencies will be there. There are certain reactionary forces and parties who want to take advantage of this over-zealousness and passion, and because of that, certainly the unity of the country is threatened.

Therefore, in order to avoid that, let us have some cool thinking. We have accepted Hindi as the official language and none in the country is against Hindi today, and we all say together that as soon as possible we should have Hindi as the official language. No person coming from any State considers English as our own language. I assure you that in India today nobody is proud to speak in English and claim that English is the only language in which he can speak. But there is an historic background. We have grown in a tradition, and because of that sometimes we are compelled to speak in English. Language is the medium by which people understand each other. If because of certain difficulties and circumstances, some people cannot understand a particular language, we have to appreciate that it will take sometime before they become conversant with it.

Every State in India is earnest to teach Hindi as part of the educational

system, as the language of the coming generation, and the coming generation, if not this generation itself, will certainly welcome Hindi as their language, and we will be able to eradicate English from this country. That is certain.

As far as Sanskrit is concerned, all of us may not be able to accept some of the recommendations made in the Report. Certain remarks were made about the learned members of the Commission yesterday. This was quite unfortunate, because there cannot be any difference of opinion on the fact that they are erudite scholars who command respect throughout the country and from every section of this House. It may be possible that because of a certain scholastic approach they have made certain impracticable recommendations. Certainly the Government is at liberty, and the hon. Minister, who is as much a Sanskrit scholar as any other, is at liberty, to give the House proposals concerning how the practical difficulties in giving effect to the recommendations could be got over and a *via media* found so that the teaching of Sanskrit could be carried on. Because of the complicated education system and the shift-over we had after independence, because of the lack of an integrated educational system, it may not be possible in every State to make Sanskrit a compulsory language. You know that the emphasis till 1947 was on Humanities and Arts. Now, it is slowly changing because the entire pattern of society is changing. We are giving more emphasis to technological education, and when we are making the shift, the question of other languages also comes in, as also that of Hindi as the national language.

Therefore, it may be difficult in some parts of the country, especially in certain States, to make Sanskrit a compulsory language, because in the very early years, especially in secondary education, it will be overburdening the students. By making Sanskrit

[Shri Narayanankutty Menon]

a compulsory language, the question should be understood in a different way. If it is meant that Sanskrit should be a compulsory language, the getting of cent per cent marks in which is a condition precedent if the student has to complete his secondary education, certainly, it may not be acceptable to many States. But if the proposition is otherwise, that when Sanskrit is made compulsory, as far as the student is concerned, if it is not a full cent per cent marks paper but is a part of the curriculum, certainly, that may be acceptable to many of the States. As it has been suggested, an experiment may be made with

**Mr. Speaker:** Does the hon Member mean that it should be a part of language paper with some percentage of marks?

**Shri Narayanankutty Menon:** It should be a part of the language paper. One language paper is there already. If this is given cent per cent marks, then it may be difficult for the student. But the language paper may be sub-divided and Sanskrit may be made compulsory in the sense that only part of the cent per cent may be given to Sanskrit.

Yesterday, my hon friend, Shri Yadhav—I am sorry he is not here—made certain remarks about Sanskrit. I do not know whether he knows very well the history of our country, the 2,000 years old history and the position of the Sanskrit language in our country. When he said that Sanskrit was not the language of the common masses, I was reminded of one of the best classics, which is accepted by everybody, Kalidasa's classic *Shakuntalam*.

It has been accepted that during those days, it was the privilege of the feudal lords to have poets in their courts. None of the poets during those days ever dared to write a theme or story in which the hero was not the king and the king always used to do the right. You will find, going through Kalidasa's *Shakuntalam*

that, for the first time in the history of Sanskrit, the language has been used in a theme where the hero is not the king and where he did not always do the right thing.

Kalidasa was also a common man, he was a shepherd and he rose by means of the Sanskrit language alone to write this classic. In that classic, he said that the king fell in love with Shankuntala, trespassed into the Ashrama and misbehaved with the girl. And when Kanwa returned, certainly, Kalidasa did not say that the King was right. When Kanwa returned he could understand the whole position and he did not upbraid Shankuntala but put the blame squarely on the king and sent Shakuntala back to the ashram. Here the king was not eulogised.

When some people go on eulogising Sanskrit and putting forward a theory of revivalism, certainly, modern people may think otherwise. I am opposed to that theory of revivalism. It is wrong to say that all that is contained in the past is the only truth and no other country or language has got the truth (*Interruption*). It is also wrong to say that what all is contained in Sanskrit is correct and that alone is correct.

Even though what you say about Sanskrit is not accepted in all the countries today—many other countries with other political faiths—they realise the fact that unless you have got the key to the best of the traditions of the land you cannot claim to be a citizen of that country, knowing your own mother country. As such, no Indian citizen today—I am convinced—can claim to be a citizen of India who knows his country very well, unless he has got a basic knowledge of Sanskrit. Not only the literature of our land, but the classics of our land, have been translated into many languages including the languages of those countries where the mythological concepts of this kind are not accepted because of the political philosophy.

They accept these as classics, as epics of those times and they translate them as far as literature is concerned.

Take any branch of science, the science of *Ayurveda*. Even though it has become out-dated, it is still enjoying one of the most important places as far as the system of treatment is concerned. *Ayurveda* which has been re-written and abridged in the form of *Ashtanga Hridaya*, is being carried on as a treatment in many parts of the country and radical cures have been found. What is the concept of that?

For thousands of years, our Rishis were trained in science, spent their lifetime in watching the plants grow, in watching biology and anatomy of the human organism. As a result of 2,000 years of experience, they have codified their experiences in this *Ayurveda* and *Ashtanga Hridaya*. Have we today become ignorant of these rich experiences of those people because we cannot understand Sanskrit and because Sanskrit is a dead language and because we say Sanskrit has gone by? Is it because of these that we do not have the benefit of the richness of *Ayurveda* and *Ashtanga Hridaya*? Certainly, we must remember them.

Yesterday, *Ramayana* was being referred to. You forget the story of Rama, the philosophy of the story, the morals of the story. If you see the *Ramayana*, you will find that every science has been referred to therein. The ancients knew them. When *Ramayana* was written, it revealed page after page the many sciences that today are known as the western science. I may remind you of one part of the *Ramayana* where Sampathi speaks. When Sampathi explains things to Hanuman he gives a verbatim, photographic picture, just as in the X-ray, of how the human embryo develops in the womb of the mother, how it comes out stage by stage and transforms. The *Ramayana* which was written in the 3rd age showed how the embryo developed in the womb of the mother, how the embryo got the food

and how it grew. The *Ramayana* says how the womb grew in seven days, how it transformed and how the nourishing food was got. Is it not worth while looking to those things where the entire treasure and experience of the past were to be seen?

The classics of Charaka and Sushruta showed how the art of surgery was practised and also pathology. The Rishis had practised them thousands and thousands of years ago, and they spent their time in watching Nature grow and all those experiences have been codified in those classics. Therefore, whether it is in the case of philosophy, in the case of history, in the case of art, in the case of science or engineering, certainly we find that the entire tradition of our country from long, long past, has become a treasure-house in the form of Sanskrit classics and literature. That is fortunate for us. Therefore, if we want to have the experience of the past, if you want to see that the synthesis of our civilisation is kept, that synthesis having come down to us through millions of years of study, certainly we have that key, and a basic understanding of Sanskrit is a condition precedent. Because unless we understand the past, we cannot claim to know of the future. Therefore, nobody will disagree that there should be a basic understanding of Sanskrit for everybody concerned. For, culture itself is defined and civilisation itself is defined as a synthesis of experiences of generations to generations, and unless we ourselves realise it, we might forget the past. So far as we of the present generation are concerned, we do not have the experiences of the past. We cannot claim that we are civilised and we are cultured in that sense. Therefore, it is essential that whatever might be spoken about Sanskrit—whether we are for it or against it—we should have a basic understanding of Sanskrit.

As far as the question of making Sanskrit as a compulsory language of study is concerned, I presume that the hon. Education Minister has not taken a definite stand in so far as the report

[Shri Narayanankutty Menon]

goes, and I think that the Government has not made any resolution as for the specific recommendations.

I place before the hon. Minister my suggestions as I have enumerated before, and he could find out how to make an integrated educational system whereby Sanskrit could also indirectly become a compulsory subject and the students are given all facilities to study the language. One word more and I finish.

There is a recommendation made for the starting of another university in regard to Sanskrit. Whatever might have been spoken in the House, I am very glad to find that every section of the House with a solitary exception yesterday was eulogising Sanskrit. But the state of affairs today is very deplorable, because since the new educational changes came in, absolutely no place has been left for Sanskrit. In any system of study, even in my State, Sanskrit used to be almost a compulsory language and every boy of four used to recite *Siddharupa* every day and get a basic idea of Sanskrit when he finishes his matriculation. Today, however, I know Sanskrit has no place, because certain far-reaching changes have been introduced in our educational system, and an integrated system of education was quite impossible. Therefore, it is for the Education Minister to ponder over this question and formulate an all-India policy whereby this language will have its proper place as far as the educational system is concerned.

As far as the Sanskrit University is concerned, I have pointed out that in my State there is a place called Kaladi. There is a college founded in the name of Shri Sankara. The intention of the founders of the college was ultimately it should grow into a university of oriental studies. But unfortunately from every source, especially Government, no help was forthcoming and now the college is undergoing certain trials and tribulations and litigation. But there is every prospect of transforming that college into a college of oriental studies and developing it into a Sanskrit univer-

sity. I was pointing out to that college especially because, whatever political philosophy I may believe and whatever political philosophy hon. Members on the other side may believe, one thing is certain that the philosophy expounded by Shri Sankara during those days, within the short period of 32 years of his life, created a stir in the country and he has stormed the intellect of every person in this land.

It is certainly a pride that the *Advaita* philosophy has been expounded by Shri Sankara to which the doors are open for every type of action and every type of thought. Certainly that has created a storm in this country at that time. We will remember and we will have to remember that it was a storm centre and a centre of learning that emerged from Kaladi. I make this earnest appeal to the hon. Minister that he should think over the question of giving some help to that college, not only in the interest of Sanskrit studies, but in the interests of the people, where there is a suitable atmosphere for the study and teaching of Sanskrit and oriental studies. I finish by making this appeal that he should be alive to the situation, and after thinking out how it can be done, he should provide facilities for Sanskrit education, with a little amount of compulsion wherever it is possible.

In conclusion, I shall repeat what I said in the beginning that let those who love Sanskrit, who are interested in Sanskrit and who want Sanskrit to be a language to be studied by everybody, talk with less passion and by doing that—not even talking about Sanskrit—then can do more. That is the case with every language in India.

पंडित ठाकुर दास भार्गव जनाब स्पीकर साहब  
से सब से पहले आपकी तबज़ मह संस्कृत कमिशन के  
टर्म्स आफ रेफ़रेन्स की तरफ़ दिखाना चाहता हूँ....

Mr. Speaker: The hon. Member may continue day after tomorrow.

12.25 hrs.

The Lok Sabha then adjourned till Eleven of the Clock on Friday, May 8, 1959/Vaisakha 18, 1881 (Saka).